Serving Education for Last 40 Years

NEERAJ®

M.H.D. -24

मध्यकालीन कविता-II

Chapter Wise Reference Book
Including Many Solved Sample Papers

Based on

I.G.N.O.U.

& Various Central, State & Other Open Universities

By: *Sanjay Jain,* **M.A. (Hindi), B.Ed.**

NEERAJ PUBLICATIONS
(Publishers of Educational Books)

Mob.: 8510009872, 8510009878 E-mail: info@neerajbooks.com
Website: www.neerajbooks.com

MRP ₹ 300/-

Content

मध्यकालीन कविता-II

Question Paper—June-2023 (Solved) 1-2
Question Paper—December-2022 (Solved) 1-2
Question Paper—Exam Held in July-2022 (Solved) 1-2
Sample Question Paper–1 (Solved) 1-2
Sample Question Paper–2 (Solved) 1-2
Sample Question Paper–3 (Solved) 1-2

S.No.	Chapterwise Reference Book	Page

मध्ययुगीनता की अवधारणा

1. मध्ययुगीनता की अवधारणा : रीतिकाल के संदर्भ में 1

2. रीतिकाल संबंधी विविध दृष्टिकोण 14

रहीम और केशव

3. नीतिकाव्य परंपरा और रहीम 25

4. रहीम के काव्य की अंतर्वस्तु, भाषा एवं शिल्प 39

5. रीतिकाव्य परंपरा और केशवदास 51

6. केशवदास : आचार्यत्व एवं कृतित्व 60

7. हिंदी आलोचना में रहीम और केशव 75

मतिराम और देव

8. मतिराम के काव्य की शृंगारिकता 87

9. मतिराम की काव्य-कला 103

10. देव की कविता 113

11. नायिका भेद की परंपरा और देव 128

12. हिंदी आलोचना में मतिराम और देव 146

■■

Sample Preview of the Solved Sample Question Papers

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

QUESTION PAPER

June – 2023

(Solved)

मध्कालीन कविता–II **M.H.D.-24**

समय : 2 घण्टे] *[अधिकतम अंक : 50*

नोट: *प्रथम प्रश्न अनिवार्य है। शेष में से किन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर दीजिए।*

प्रश्न 1. निम्नलिखित पद्यांशों में से किन्ही दो की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए–

(क) रहिमन विपदा हूँ भली, जो थोरे दिन होय।
हित अनहित या जगत में, जानि परत सब कोय॥

उत्तर–संदर्भ–प्रस्तुत दोहा कवि रहीमदास द्वारा रचित है। कवि रहीम ने नीति की बातों को दोहे के माध्यम से समझाया है। इस दोहे में रहीम बताना चाहते हैं कि विपदा में ही अपने-पराये की पहचान हो पाती है।

व्याख्या–कवि रहीम कहते हैं कि जब व्यक्ति पर विपदा आती है, तो वह थोड़े दिनों में दूर हो जाती है, किंतु विपदा आने पर व्यक्ति यह जान जाता है कि संसार में संबंधी, मित्र एवं परिजन कहे जाने वाले लोगों में कौन अपना है, कौन पराया है। हित-अहित चाहने वाले सभी की पहचान विपदा पड़ने पर हो जाती है।

विशेष–1. दोहा छंद है।

2. नीतिपरकता है।

3. गहन सांसारिक ज्ञान की झलक है।

(ख) केशव ये मिथिलाधिप हैं जग में जिन
कीरति-बेलि वई है।
दान-कृपान बिधानन सों सिगरी
बसुधा जिन हाथ लई है।
अंग छः सातक आठक सों भव
तीनहु लोक में सिद्धि भई है।
वेदत्रयी अरु राजसिरी परिपूरणता
शुभ योगमई है॥

उत्तर–संदर्भ–प्रस्तुत पद रीतिकालीन कवि केशवदास की 'रामचंद्रिका' से उद्धृत है। इस पद में विश्वामित्र ने मिथिला के राजा जनक के गुणों की प्रशंसा की है।

व्याख्या–विश्वामित्र कहते हैं कि ये जो मिथिला के राजा जनक हैं, इनकी कीर्तिबेल सारे संसार में फैली है। अपने दान और कृपा करने के गुणों से सारे संसार को अपने समक्ष नतमस्तक कर दिया है और अब मानो सारी वसुधा उनके हाथों में आ गई है। उनकी सिद्धि तीनों लोकों में प्रसिद्ध है। वेदत्रयी अर्थात् तीन वेदों में उनकी एवं उनके राज्य की परिपूर्णता का शुभ वर्णन है।

विशेष–1. ब्रज भाषा है।

2. राजा जनक को सच्चा राजा बताते हुए उनकी प्रशंसा की है।

3. 'कीरति बेल' में रूपक अलंकार है।

(ग) नींद, भूख अरु प्यास तजि, करती हो तन राख।
जलसाई बिन पूजिहैं, क्यों मन के अभिलाख॥

उत्तर–संदर्भ–प्रस्तुत दोहा रीतिकालीन कवि मतिराम द्वारा रचित है। कवि कहते हैं कि भक्ति की लगन लगने पर व्यक्ति भूख-प्यास सब भूल जाता है तथा तन की सुध नहीं रहती है।

व्याख्या–कवि कहते हैं कि भक्ति में नींद, भूख और प्यास और भक्त तज देता है। जिस प्रकार उत्सव के बिना पूजा से मन की अभिलाषा पूर्ण नहीं होती, उसी प्रकार भक्ति की लगन के बिना ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती।

विशेष–1. ब्रज भाषा है।

2. भक्ति रस की अभिव्यक्ति है।

(घ) ह्वै सपने तिय को पिय आइ,
दई हिय लाइ बनाइ बिरी त्यों।
चुंवत ही चख चौंकि परी,
सुचितै चकि सेज ते भूमि गिरी त्यों।
देव जू द्वारा किवारन हूँ झंझरीन झरोखनि
झाँकि फिरी त्यों।
दीन ज्यों मीन जरा की भई, सु फिरै फरकै
पिंजरा की चिरी त्यों॥

उत्तर–संदर्भ–प्रस्तुत कवित्त कवि देव द्वारा रचित है। इन पंक्तियों में कवि ने विरह में तड़प रही नायिका का वर्णन किया है। नायिका अपने प्रिय का सपना देखकर अत्यंत चकित हो जाती है और उसे प्रिय के मिलन की आस होने लगती है।

व्याख्या–कवि कहते हैं कि नायिका को अपने प्रिय की याद आ रही है। उसे सपने में अपने प्रिय के दर्शन होते हैं, तो

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

हृदय में प्रिय के मिलन की अग्नि जलने लगती है। उसे लगता है कि प्रिय आ गए हैं, तो वह चौंक जाती है और उसे लगता है जैसे सेज से भूमि पर गिर गई है। कवि देव कहते हैं कि नायिका को लगता है मानो प्रिय दरवाजे की झिरी से झांक रहे हैं। उसकी शरीर रूप मछली तड़पने लगती है, उसके मन का पंछी पिंजरा तोड़कर बाहर आने को मचल जाता है अर्थात् वह अत्यंत व्याकुल हो उठती है।

विशेष–1. ब्रज भाषा का लालित्य है।

2. वियोग श्रृंगार है।

3. कवित्त छंद है।

4. उत्प्रेक्षा एवं रूपक अलंकार की छटा है।

प्रश्न 2. रीतिकालीन कविता के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-1, पृष्ठ-6, प्रश्न 4

प्रश्न 3. नीतिकाव्य परंपरा के विकास में रहीम के योगदान पर प्रकश डालिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-3, पृष्ठ-34, प्रश्न 4

प्रश्न 4. मतिराम के श्रृंगार वर्णन का विवेचन कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-8, पृष्ठ-89, प्रश्न 1

प्रश्न 5. देव की कविता के वर्ण्य-विषयों की चर्चा कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-10, पृष्ठ-114, 'देव की कविता के वर्ण्य विषय'

प्रश्न 6. निम्नलिखित विषयों में से किन्हीं दो पर टिप्पणियां लिखिए–

(क) रीतिकाल का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-1, पृष्ठ-2, 'रीतिकाल का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य'

(ख) प्रताप साही की काव्यगत विशेषताएं

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-5, पृष्ठ-56, 'प्रताप साहि'

इसे भी जोड़ें–प्रताप साहि 'रतनसेन बंदीजन' के पुत्र थे और चरखारी, बुंदेलखंड के महाराज 'विक्रमसाहि' के यहाँ रहते थे। इन्होंने संवत् 1882 में 'व्यंग्यार्थ कौमुदी' और संवत् 1886 में 'काव्य विलास' की रचना की। इन दोनों परम प्रसिद्ध ग्रंथों के अतिरिक्त निम्नलिखित पुस्तकें इनकी लिखी हुई हैं–

जयसिंह प्रकाश,	श्रृंगारमंजरी,
श्रृंगार शिरोमणि,	अलंकार चिंतामणि,
काव्य विनोद,	रसराज की टीका,
रत्नचंद्रिका,	जुगल नखशिख,
बलभद्र नखशिख की टीका।	

इनका कविता काल संवत् 1880 से 1900 तक ठहरता है।

इनकी रचनाओं से इनकी साहित्यमर्मज्ञता और पांडित्य का अनुमान होता है। आचार्यत्व में इनका नाम मतिराम, श्रीपति और भिखारी दास के साथ आता है और एक दृष्टि से इन्होंने उनके चलाए हुए कार्य को पूर्णता को पहुँचाया था। लक्षणा एवं व्यंजना का उदाहरणों द्वारा विस्तृत निरूपण पूर्ववर्ती तीन कवियों ने नहीं किया था। इन्होंने व्यंजना के उदाहरणों की एक अलग पुस्तक ही 'व्यंग्यार्थ कौमुदी' के नाम से रची। इसमें कवित्त, दोहे, सवैये मिलाकर 130 पद्य हैं, जो सब व्यंजना या ध्वनि के उदाहरण हैं।

नायिकाओं के भेदों, रसादि के सब अंगों तथा भिन्न-भिन्न बँधो उपमान का अभ्यास न रखने वाले के लिए ऐसे पद्य पहेली ही समझिए। उदाहरण के लिए 'व्यंग्यार्थ कौमुदी' का सवैया–

सीख सिखाई न मानति है, बर ही बस संग सखीन के आवै।
खेलत खेल नए जल में, बिना काम बृथा कत जाम बितावै
छोड़ि के साथ सहेलिन को, रहि के कहि कौन सवादहि पावै।
कौन परी यह बानि, अरी! नित नीरभरी गगरी ढरकावै।

घड़े के पानी में अपने नेत्रों का प्रतिबिंब देख उसे मछलियों का भ्रम होता है। इस प्रकार का भ्रम एक अलंकार है। अत: भ्रम या भ्रांति अलंकार, यहाँ व्यंग्य हुआ। 'भ्रम' अलंकार में 'सादृश्य' व्यंग्य रहा करता है अत: अब इस व्यंग्यार्थ पर पहुँचे कि 'नेत्र मीन के समान हैं'।

प्रतापसाहि का काव्य कौशल अपूर्व है। उन्होंने एक रस ग्रंथ के अनुरूप नायिका भेद के क्रम से सब पद्य रखे हैं, जिससे उनके ग्रंथ को नायिका भेद का एक अत्यंत सरस और मधुर ग्रंथ भी कह सकते हैं।

आचार्यत्व और कवित्व दोनों के एक अनूठे संयोग की दृष्टि से मतिराम, श्रीपति और दास से ये कुछ बीस ही ठहरते हैं।

भाषा की स्निग्ध सुख सरल गति, कल्पना की मूर्तिमत्ता और हृदय की द्रवणशीलता मतिराम, श्रीपति और बेनी प्रवीन के जाती है, तो उधर आचार्यत्व इन तीनों में भी और दास से भी कुछ आगे दिखाई पड़ता है। इनकी प्रखर प्रतिभा ने मानो पद्माकर की प्रतिभा के साथ रीतिबद्ध काव्यकला को पूर्णता पर पहुँचाकर छोड़ दिया। पद्माकर की अनुप्रास योजना कभी कभी रुचिकर सीमा के बाहर जा पड़ी है, पर इस भावुक और प्रवीण की वाणी में यह दोष कहीं नहीं आने पाया है। इनकी भाषा में बड़ा गुण यह है कि यह बराबर एक समान चलती है, उसमें न कहीं कृत्रिम आडंबर है, न गति का शैथिल्य और न शब्दों की तोड़ मरोड़।

(ग) केशवदास के काव्य में अध्यात्म तथा दर्शन

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-6, पृष्ठ-67, 'अध्यात्म तथा दर्शन'

(घ) देव की कविता में नैतिक मूल्य

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-10, पृष्ठ-116, 'नैतिक मूल्य'

■■

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

Sample Preview of The Chapter

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

मध्यकालीन कविता-II

मध्ययुगीनता की अवधारणा

मध्ययुगीनता की अवधारणा : रीतिकाल के संदर्भ में

1

परिचय

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने रीतिकाल का समय संवत् 1700 से 1900 अर्थात् (1643 ई. से 1843 ई.) तक निर्धारित किया है। इस समय तक भारत में मुगल साम्राज्य स्थापित हो चुका था, इसलिए हिंदी कविता पर भी फारसी भाषा का भी प्रभाव दिखाई देता है। हालांकि भक्ति का प्रभाव भी इस काल में दिखाई पड़ता है, परंतु रीति ग्रंथों का निर्माण भी जारी रहा। प्राय: लोग इसे हिंदू राज, मुस्लिम शासन एवं ईसाई शासन के रूप में भी जानते हैं। इटली के पुनर्जागरण से आधुनिक युग की शुरुआत मानी जाती है। यह उत्तर आधुनिक काल तक चला आया।

आचार्य हजारीप्रसाद हिंदी साहित्य को मध्य युग से आरंभ मानते हैं। आदिकाल भी भारतीय इतिहास के मध्यकाल का भाग है। चौदहवीं से अठारहवीं शताब्दी भक्तिकाल के अंतर्गत मानी जाती है, जिसका हिंदी साहित्य में अपना एक विशेष स्थान है, जबकि डॉ. रामविलास शर्मा 12वीं शताब्दी को पूंजीवाद काल घोषित करते हैं। देखा जाए तो यह समय आधुनिक काल में आता है। अत: रीतिकाल भी आधुनिक काल के भीतर आता है।

अध्याय का विहंगावलोकन

मध्ययुगीनता की अवधारणा

देखा जाए तो मध्ययुग और मध्ययुगीनता में अंतर पाया जाता है। मध्ययुग कालवाचक कहलाता है, जबकि मध्ययुगीनता एक मनोवृत्ति है और यह एक विचार-दृष्टि मानी जाती है। कुछ विचारक मध्य युग को आधुनिक काल से पूर्व और प्राचीन काल के बाद का समय मानते हैं।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने स्पष्ट करते हुए कहा है, "मध्ययुग या मध्यकाल शब्द भारतीय भाषाओं में नया ही है। आजकल इसका प्रयोग एक ऐसे काल के अर्थ में होने लगता है, जिसमें सामूहिक रूप से मनुष्य एक जब दी हुई स्तब्ध मनोवृत्ति का शिकार हो जाता है।" प्राचीनकाल के विचारकों का मानना था कि वे कुछ 'नया' बता रहे हैं। आधुनिक चिंतकों ने भी सृष्टि के रहस्यों पर प्रकाश डाला। भारतीय हो या यूरोपीय मध्ययुग के चिंतक, विचारक, लेखक यह मानते थे कि हम कुछ नया कहने की स्थिति में नहीं है। हम केवल शास्त्रों से संगति बिठाने का कार्य अच्छी प्रकार कर सकते हैं।

मध्यकाल में यह स्पष्ट हो गया कि सारा ज्ञान वेदों में समाहित है। यह सत्य है कि सभी के लिए वेदों का सुगम कार्य नहीं है, इसलिए प्राचीनकाल में पांचवें वेद भरत के 'नाट्यशास्त्र' की रचना हुई। शंकुक तथा अभिनवगुप्त ने भी इस सूत्र की व्याख्या की। तुलसीदास जी ने 'रामचरितमानस' की रचना की, जबकि कबीरदास अपनी आँखों देखी का वर्णन कर रहे हैं।

अत: आधुनिकता और मध्ययुगीनता की तुलना करें, तो हम कह सकते हैं कि 'सप्रश्न दृष्टि' आधुनिकता है। आधुनिकता सभी स्वीकृत सिद्धांतों, आप्त वचनों, शास्त्रों और विचारों पर संदेह करते हुए उन्हें प्रश्नसूचक दृष्टि से देखती है, जबकि मध्ययुगीन आप्त वचनों पर विश्वास करती है। पुराने समय से ही भारतीय दर्शन और चिंतन में चाहे जितने मतभेद हो, परंतु दोनों विरोधी इस बात पर एकमत हैं, वह है, कर्मफल की धारणा और दूसरा पुनर्जन्म की धारणा। मनुष्य को कर्मानुसार फल जरूर मिलता है। पुनर्जन्म की इन धारणाओं के कारण भारतीय समाज में विद्रोह नहीं आता। यह बात भी पुनर्जन्म में मानी जाती है कि 84 लाख योनियों में मानव श्रेष्ठ है, इसलिए भक्तिकाल के कवि यह कामना करते हैं कि जन्म-मरण के इस बंधन से मुक्ति मिले। मध्यकालीन जीवन स्तर चिंतन को छोड़कर सामाजिक जीवन में भी व्यवस्थित हो चुका था। वर्णाश्रम व्यवस्था कब प्रारंभ हुई। इसकी कोई जानकारी प्राप्त नहीं है। हाँ, इसके भीतर ही जाति प्रथा का विकास हो गया था। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चार वर्ण माने गए थे। मनुष्य की आयु सौ वर्ष मानी जाती थी। इसके आधार पर ही ब्रह्मचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम बनाए गए। वर्णसंकर जातियों को कोई सम्मान प्राप्त न था।

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

वर्णाश्रम व्यवस्था में व्यक्ति का न तो विजातीय विवाह हो सकता था, न ही वह अपने पेशे को परिवर्तित कर सकता था। शूद्र वेदों का अध्ययन नहीं कर सकता था। वेद चार माने माने जाते थे–ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद। इसी प्रकार छह वेदांग हैं। ये वेद तो नहीं थे, पर वेद के अंग हैं। वेदों को भली भाँति समझने के लिए इन वेदांगों का अध्ययन किया जाना जरूरी है। ये हैं–ध्वनि शास्त्र (शिक्षा), अनुष्ठान (कल्प), व्याकरण, व्युत्पत्ति (निरुक्त), छंद और खगोलशास्त्र (ज्योतिष)। इनके अतिरिक्त 18 पुराण हैं। भक्त कवि स्वर्ग-नरक में विश्वास करते थे, उनका अलौकिक सत्ता में भी अटल विश्वास था।

रीतिकाल में तो काम को प्रमुखता देना प्रारंभ हो गया। इस काल के कवियों के लिए धार्मिक ग्रंथ त्याज्य तो नहीं थे, पर महत्त्वपूर्ण नहीं रह गए थे। सभी रसराज शृंगार रस का भोग करते थे। यह परंपरा संस्कृत से हिंदी में आई थी। संस्कृत का अलंकृत काव्य इन कवियों का आदर्शमात्र था। रीतिकाल में कवियों के देवता कामदेव थे। इन कवियों की रुचि धार्मिक ना होकर बदल गई थी। मध्ययुगीनता के भीतर इनका भी साहित्य आता है। परवर्ती संस्कृत काव्य से लेकर भक्तिकाल और रीतिकाल में प्रवाहित होता रहा।

रीतिकाल का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

मुगल साम्राज्य के स्थायित्व के पश्चात् से रीतिकाल प्रारंभ हुआ। जब मुगल शासन निर्बल हो गया और उसके बादशाह जल्दी-जल्दी परिवर्तित होने लगे, तो स्थानीय शक्तियों का उदय हुआ। मराठों और अकाली आंदोलनों के फलस्वरूप मुगल शासन निर्बल पड़ गया। 1857 में बहादुरशाह जफर के शासन का अंत हो गया। इसके बाद शक्तिशाली सामंतों का उदय हुआ। इनके राजदरबारों में भी कवियों का होना जरूरी था। प्राचीन भारतीय साहित्य और संस्कृत के जानकार विद्वानों का मत है कि राजसभा में सात अंग होने चाहिए। इनमें ये अंग हैं–विद्वान, कवि, भाट, गायक, मसखरे, इतिहासज्ञ और पुराणज्ञ। राजा भोज के दरबार में नौ महान विभूतियाँ थीं। इसी तर्ज पर अकबर के नौ रत्न प्रसिद्ध थे। वे थे–अबुदल फजल, टोडरमल, तानसेन, मानसिंह, अब्दुल रहीम खानखाना, मुल्ला दो प्याजा, हकीम हमाम और दरबारी कवि फैजी। कहने का अभिप्राय यह है कि भक्तिकाल के समाप्त होते-होते कुलीन वर्ग में इन दरबारी कवियों का महत्त्व अधिक हो गया।

लक्षण ग्रंथ

आचार्य द्विवेदी के मतानुसार रीतिकाल के कवियों के तीन मूल प्रेरणा स्रोत थे–

1. विभिन्न प्रकार की प्रेम क्रीड़ाओं को प्रदर्शित करने वाले कामशास्त्र।

2. भक्ति वैचित्र्य का विवेचन करने वाले अलंकार शास्त्र।

3. नायक-नायिका के विभिन्न भेदों और स्वभावों का विवेचन करने वाले रस शास्त्र।

इस समय के कवियों ने लक्षण ग्रंथों की रचना अधिक की। इनमें काव्य के विविध अवयवों की शिक्षा दी जाती थी। इस कार्य में कोई मौलिक सिद्धांत नहीं बना था।

आचार्य शुक्ल जी के अनुसार नायिका भेद का विवेचन सर्वप्रथम 'हिततरंगिणी' में किया था। इसके बाद केशवदास ने काव्य के लक्षणों का विवेचन अपने दो ग्रंथों–'कविप्रिया' और 'रसिकप्रिया' में किया। 'रसमंजरी' में नंददास ने नायिकाओं के भेद व्यक्त किए। आचार्य शुक्ल के अनुसार रीति ग्रंथों की अखंड परंपरा चिंतामणि से चली। अत: रीतिकाल की शुरुआत उन्हीं से मानी जानी चाहिए। रीतिकाव्य के आलोचकों का मत है कि हिंदी के लक्षण ग्रंथाकर्त्ता मूलत: कवि थे। वे चिंतक बिल्कुल नहीं थे। शुक्ल जी का मानना है कि इन कवियों की रचनाएँ संस्कृत कवियों से श्रेष्ठ हैं। द्विवेदी जी रातिकाल के काव्य को भी संस्कृत काव्य के मुक्तक 'अलंकृत काव्य' की श्रेणी या वर्ग में रखते हैं।

कविता का उद्देश्य

कविता लिखने के पीछे कोई-न-कोई उद्देश्य अवश्य होता है। रीतिकालीन कविता की बात करें, तो इस समय के कवि कविता से धन की प्राप्ति चाहते थे। ये कविताएँ ही उनकी आजीविका का एकमात्र सहारा थीं। उदाहरण के लिए, कवि बिहारी को एक दोहे के लिए एक अशर्फी प्राप्त होती थी।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कवियों के आश्रयदाताओं का भी वर्णन किया है। सूदन राजा सूरजमल के यहाँ रहते थे। द्विजदेव अयोध्या के महाराज के आश्रित थे। पद्माकर भट्ट कई राजाओं के दरबार में गए। देव अनेक रईसों के आश्रय में रहे। भूषण कवि कई जगहों पर भटकने के पश्चात् अंत में छत्रसाल और शिवाजी के आश्रय में रहे। ऐसे कई कवियों के उदाहरण मिलते हैं। वास्तव में उस समय हिंदी में एक मुहावरा प्रचलित हुआ–ठकुरसुहाती कहना अर्थात् ऐसी बात कहना जो ठाकुर को अच्छी लगे। उस समय वही कविता अच्छी मानी जाती थी, जो कवियों के आश्रयदाताओं को पसंद आने के साथ-साथ सभी दरबारियों को भी पसंद आए और जिसे वाह-वाही की प्राप्ति होती। दरबार में प्राय: प्रौढ़ और युवा पुरुष ही बैठा करते थे, जिनकी अभिरुचि शृंगार रस में रहा करती थी। इस रीतिकाल में जितनी भी कविताएँ लिखी गईं, उनमें स्त्री 'पदार्थ' है, 'विषय' है, वह 'सहृदय' नहीं है। इस समय यह माना जाता था कि यदि आप लक्षण ग्रंथ पढ़ रहे हैं, तो आप आसानी से कविता बना सकते थे। अत: उसे कविता सिर्फ आत्म अभिव्यक्ति नहीं, निर्वैयक्तिक कारीगरी है।

रीतिकालीन कविता में पाठक न होकर श्रोता हुआ करते थे। कवि ने कल जो कविता सुनाई, उसे याद रखने की जरूरत नहीं होती थी आज जो कविता सुनाई है, उसे याद रखने की आवश्यकता होती थी। इसीलिए देव, बिहारी, घनानंद, मतिराम ने मुक्तक रचनाएँ की हैं। रीतिकाल की कविता युवावस्था की और

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

श्रृंगार रस की कविता है। इसका पसंद किया जाने वाला विषय नायिका भेद है। इस काल का नायक अपनी नायिकाओं से सहमति प्राप्त कर प्रेमालाप करता है। इस काल में नायकों की दृष्टि में स्त्री भोग की वस्तु है। उसका अपना कोई मानवीय अस्तित्व नहीं है।

कुछ आलोचकों का यह कहना है कि बिहारी रीतिकालीन काव्य 'सामंती अभिजात्य' के कवि हैं। सारा नायिका-भेदी काव्य पुरुष दृष्टि का काव्य है। स्त्रियाँ अपने आपको प्रस्तुत करने के लिए सजती-सँवरती रहती हैं। सामंती समाज को रिझाने में ही उनकी सार्थकता है।

भारत में प्राचीन समय में बहुविवाह प्रथा प्रचलित थी। धीरे-धीरे यह प्रथा समाप्त हो गई। सामान्य गृहस्थ के सामने एक पति एक पत्नी का आदर्श था, फिर भी राजा लोग बहुविवाह किया करते थे। मुस्लिम शासन के समय तो 'हरम' की व्यवस्था थी। राजा को यदि कोई स्त्री पसंद आती, तो उसे पकड़कर हरम में रखा जाता था।

इस काल में बहुपत्नी होने के कारण स्त्री द्वारा पतियों को अपने वश में रखने की बात थी। जायसी के 'पद्मावत' में भी सौतिया डाह के कई उदाहरण हैं। अत: रीतिकालीन साहित्य स्त्री-पुरुष के यौन संबंधों के इर्द-गिर्द घूमता दिखाई पड़ता है।

नायक-नायिका भेद

रीतिकाल के कवि की दृष्टि से यदि हम देखें तो पत्नी भी पत्नी न होकर एक नायिका ही होती है, जिसे 'स्वकीया' कहा जाता है। दूसरे के स्त्री परकीया होती है। रीतिकाल के कवियों के नायिक भेद का परिप्रेक्ष्य मध्ययुगीन है।

इस परंपरा के तीन स्रोत हैं–काव्यशास्त्र, इसकी शुरुआत भरत के 'नाट्यशास्त्र', से मानी जा सकती है। दूसरा है–कामशास्त्रीय ग्रंथ। तीसरा है–कृष्ण भक्तिकाव्य परंपरा। इसके अनुसार कृष्ण एक हैं एवं उनकी भांति-भांति की बहुत सारी गोपियाँ हैं। उनके स्वभाव की चर्चा की है। जगदीश गुप्त के अनुसार देव ने नायिकाओं के 384 भेद किए हैं।

संस्कृत काव्यशास्त्र में श्रृंगार रस का आलंबन विभाव नायक होता है। जो नायक नायिका को खुश रखता है, वह उत्तम नायक तथा जो नायिका को अप्रसन्न करता है, वह मध्यम तथा जो नायिका की उपेक्षा करता है, अधम नायक कहलाता है। किसी ने मानी, चतुर, अनभिज्ञ और प्रेषित के रूप में नायकों को वर्गीकृत किया है।

जहाँ तक नायिकाओं के भेद का संबंध है, वे हैं–स्वकीया, परकीया, सामान्या।

नायिकाओं को पद्मिनी, चित्रिणी, शंखिनी और रतिरहस्य में वर्गीकृत किया है। काव्यशास्त्र में स्वकीया नायिका को आयु के अनुसार मुग्धा, मध्या और प्रगल्भा के रूप में विभाजित किया है। भानुदत्त ने भी मुग्धा के दो भेद किए हैं–अज्ञात यौवना, ज्ञात यौवना।

कुछ आचार्यों ने आयु के अनुसार से नायिकाओं का विभाजन किया हैं–देवी, देव गंधर्वी, गंधर्व मानवी, मानुषी।

कुल मिलाकर हम कह सकते हैं, रीतिकाव्य शारीरिक सुख की मादक कल्पना का साहित्य है। कभी विभिन्न नायिकाओं के द्वारा इस कल्पना को वाणी देते हैं। यह सुख जैविक है। नायिका और नायक दोनों ही जैविक इकाई हैं।

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1. रीतिकालीन काव्य की मध्ययुगीनता पर प्रकाश डालिए।

उत्तर–वास्तव में मध्ययुग और मध्ययुगीनता में अंतर है। मध्ययुग कालवाचक है, किंतु मध्ययुगीनता देखा जाए तो एक मनोवृत्ति और विचारदृष्टि है।

कुछ विचारकों के मतानुसार मध्ययुग से अभिप्राय आधुनिक काल से पहले का तथा प्राचीन काल के बाद का काल है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने मध्यकालीनता को स्पष्ट करते हुए कहा है कि उनका मध्ययुग या मध्यकाल का शब्द भारतीय भाषाओं में बिल्कुल नूतन है। आजकल इस शब्द का प्रयोग एक ऐसे काल के अर्थ में होने लगा है, जिसमें सामूहिक रूप से मनुष्य एक जबदी हुई स्तब्ध मनोवृत्ति का शिकार हो जाता है।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने दार्शनिक ग्रंथों का अध्ययन किया और 'स्तब्ध' और 'जबदी' हुई मनोवृत्ति का विश्लेषण भी किया। पुराने समय के विचारकों का मत का था, जो बात पहले किसी के नहीं कहीं, उसे नए रूप में कह रहे हैं। इसी भांति आधुनिक चिंतकों ने भी सृष्टि के रहस्यों की नई व्याख्या की। पुनर्जागरण काल के विचारों के अनुसार अरस्तु बहुत ही महान थे। उन्होंने अनेक मौलिक बातें प्रस्तुत कीं, परंतु यही तर्क ही काफी नहीं है। भारतीय हो या यूरोपीय मध्ययुग के चिंतक, विचारकों और लेखकों का मानना था कि सभी ज्ञान की बातें अतीत में पहले की जा चुकी हैं। इसमें कुछ भी नया नहीं है हम केवल पुराने ग्रंथों को समझ और समझा सकते हैं। उनकी टीकाएँ कर सकते हैं।

मध्यकाल में यह बात कहीं गई थी कि सारा ज्ञान वेदों में निहित है। प्रत्येक तर्क का यदि हम प्रमाण देना चाहें, तो उसका आधार वेद हैं। सभी व्यक्तियों के लिए वेदों को पढ़ना तो कोई सुगम कार्य नहीं है। ऐसे व्यक्ति जो वेद नहीं पढ़ सकते, तो उनके लिए क्या पठन सामग्री होगी?

प्राचीन काल में ही पाँचवें वेद की रचना हो गई। अब प्रश्न उठता है कि 'महाभारत' पांचवां वेद है अथवा भरत के 'नाट्यशास्त्र' को पांचवां वेद स्वीकार किया जाए। उदाहरणार्थ भरत ने 'रससूत्र' की रचना की थी, जिसकी परवर्ती चिंतकों ने आलंबन व्याख्या की।

भट्ट लोल्लट के अनुसार स्थायी भाव ही रस है। शंकुक ने भी व्याख्या करते हुए कहा है कि रस अनुमिति होता है। रससूत्र की व्याख्या तो अभिनवगुप्त भी की है। उनके अनुसार रस स्थायी विलक्षण होता है। स्थायी भाव काव्य में होता है, जबकि रस की उपस्थिति सहृदय के चित्त में होती है। अत: हम कह सकते हैं

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

कि रस की अनुभूति आनंदात्मक होती है। रस के सभी व्याख्याओं ने भरत के मत को आधार बनाकर ही अपना मत समझाया है।

इस मानसिकता को यदि महाकवि तुलसीरास के अनुसार देखा जाए तो हम पाते हैं कि 'रामचरितमानस' की रचना करने वाले तुलसीदास जी की यह मौलिक रचना थी, किंतु तुलसीदास जी का यही कहना था वे नाना पुराण निगमागमों के आधार पर ही उसकी रचना कर रहे हैं।

दूसरी तरफ कबीरदास जी हैं, जो समाज और जगत में आंखों देखी बातों का उल्लेख कर रहे हैं। यह इन दोनों कवियों को मध्ययुगीनता बोध के भीतर ही रखती है।

आधुनिकता और मध्ययुगीनता का तुलनात्मक अध्ययन करें, तो 'सप्रश्न दृष्टि' ही आधुनिकता प्रतीत होगी। आज का आधुनिक युग सभी मान्य सिद्धांतों, शास्त्रों और विचारों तथा आप्त वचनों पर संदेह करता है और प्रश्नसूचक दृष्टि से देखता है, जबकि इसकी तुलना में मध्ययुगीनता में जो है, उसे सही माना गया है। शास्त्रों में जो कहा गया है, उसे ही सत्य माना है। आप्त वचनों में विश्वास दिखाया गया है। इसके अनुसार इन सब पर अविश्वास दिखाना यानी पाप का भागी बनना है।

हमने यह भी देखा कि मध्यकाल का कोई कवि ज्वलंत प्रश्न उठाता है, तो उसे हम आधुनिक कवि कहकर पुकारने लगते हैं। इसका ताजा उदाहरण कबीरदास जी हैं, जो अपने प्रश्नों की वजह से आधुनिक लगते हैं।

पुराने समय से ही भारतीय दर्शन और चिंतन पर सहमति बनी हुई है। बेशक इनमें मतभेद भी है। परतु दोनों विरोधी भी कर्मफल और पुनर्जन्म की धारणा पर एकमत होते दिखाई पड़ते है। इनके अनुसार मनुष्य जो कर्म करता है। उसका फल अवश्य प्राप्त होता है, यदि उस व्यक्ति को उस समय वह फल प्राप्त नहीं हुआ, तो बाद में प्राप्त होगा। कई बार कष्टों के आने पर इसकी जिम्मेदारी पूर्वजन्म के कर्मों के फल पर डाल दी जाती है। इससे भारतीय समाज में किसी प्रकार का विद्रोह होता दिखाई नहीं पड़ता। कबीरदास और महाकवि तुलसीदास की दार्शनिक वैचारिक मान्यताओं में चाहे भेद देखा जाता है, फिर भी इन दोनों मान्यताओं पर ये सभी कवि एकमत हैं।

हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार, "मध्यकालीन भारतीय मनीषा जगत के सामंजस्य विधान में संदेह नहीं करती। वह सर्वोपरि है।" पुनर्जन्म की धारणा के अनुसार मध्य युग में भी यह बात स्वीकार की गई थी कि 84 लाख योनियों में मानव योनि सबसे उत्तम तथा श्रेष्ठ है। मानव कई योनियों में भटकने के पश्चात् मानव देह को पाता है। इसे प्राप्त करने के लिए मानव को पुण्य के कार्य करने चाहिए और भगवान की भक्ति के साथ-साथ मुक्ति के उपाय भी करने चाहिए, भक्तिकालीन कवियों का मानना था कि जो व्यक्ति अज्ञानी और नादान है, वे इसे 'काम का कीड़ा' बुलाते हैं। रीतिकाल के अनुसार ऐसा व्यक्ति 'रसिक' माना जाता है। भक्तिकालीन कवियों का मानना है कि परमात्मा की भक्ति करके मानव इस जन्म-मरण के बंधन से मुक्ति प्राप्त कर सकता है।

मध्यकालीन जीवन चिंतन के स्तर के साथ सामाजिक जीवन में भी व्यवस्थित हुआ था। वर्णाश्रम व्यवस्था का प्रारंभ हुई, इसके बारे में कोई सटीक जानकारी उपलब्ध नहीं है। इसी से ही वर्ण व्यवस्था का विकास हुआ, जिनमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र थे। मानव की आयु की कल्पना 100 वर्ष आँकी गई। इसी आधार पर चार आश्रम–ब्रह्मचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम और संन्यास आश्रम बनाए गए। वर्णाश्रम और जाति प्रथा के दो सिद्धांतों को मान्यता मिल चुकी थी, कोई व्यक्ति सिर्फ अपनी जाति में ही विवाह कर सकता था। इन नियमों का उल्लघंन करने पर उसे सज़ा मिलती थी। यदि व्यक्ति दूसरी जाति में विवाह करता, तो उसे समाज या जाति से बाहर का रास्ता दिखा दिया जाता। उनसे उत्पन्न संतान से बाद में उसकी नई जाति बन जाया करती थी। इस व्यवस्था में बाद में इतनी ढील दे दी गई, जिसमें स्त्री-पुरुष अन्य जाति में रिश्ते तो रख सकते थे, परंतु विवाह नहीं हो सकता था। इसके अतिरिक्त वर्णाश्रम व्यवस्था के अंतर्गत कोई व्यक्ति अपने व्यवसाय में परिवर्तन नहीं कर सकता था। शूद्र वेदों का अध्ययन नहीं कर सकते थे। वेदों का विरोध इस पूरे दौर में हुआ। वेद प्रमाण हैं इस बात को सभी नहीं मानते थे। वेद चार थे–ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद। इसी प्रकार वेदों की तरह छह वेदांग हैं। ये वेदों के अंग कहलाते हैं। ये हैं–ध्वनि शास्त्र, अनुष्ठान, व्याकरण, व्युत्पत्ति, छंद और खगोलशास्त्र। इनके अतिरिक्त वैदिक परंपरा में देखे तो ब्राह्मण ग्रंथ और 18 पुराण भी हैं।

उत्तर वैदिक काल में बौद्ध मत, नाथ संप्रदाय, सिद्ध जिसके 84 सिद्ध मान्य हैं, जैन धर्म, कापालिक, शाक्त योग, सहज साधकों का वर्णन मिलता है। मध्यकाल में भी ये परंपराएँ चलती रहीं। भक्तिकाल के कवियों का ईश्वर में अटूट विश्वास रहा। ये देवता, मंदिर, उपासना पद्धति, तीर्थाटन, स्वर्ग-नरक में विश्वास किया करते थे। बहुत कम विचारक रहे, जो इन मान्यताओं को सप्रश्न दृष्टि से देखते थे। सबका उस परमात्मा में विश्वास समाया हुआ था। उदाहरणार्थ, मीरा श्रीकृष्ण की भक्त थी। उन्हें भी कृष्ण कभी नहीं मिले, पर उनके होने पर उनकी दृढ़ आस्था थी।

पूर्व मध्यकाल की इन मान्यताओं को उत्तर मध्यकाल में भी किसी ने किसी प्रकार की चुनौती नहीं दी गई। रीतिकाल में 'काम' को प्रमुखता दी जाने लगी। कवियों के लिए वेद आदरणीय तो थे, पर अब अधिक महत्त्व नहीं रखते थे, रीतिकाल में कवियों ने युवावस्था एवं शारीरिक आकर्षण पर बल दिया। वे सोचते थे वृद्धावस्था में ईश्वर को याद कर लेंगे।

संस्कृत का अलंकृत काव्य इन कवियों का आदर्श स्वरूप था। इसका वर्णन और विवेचन करते हुए आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com